लेटर्स पेटेंट अपील

माननीय न्यायमूर्ति मेहर सिंह व आर०एस० नरूला के समक्ष

हरियाणा राज्य और अन्य,
-अपीलकर्ता

बनाम

बलदेव कृष्ण शर्मा और अन्य,
-प्रतिवादी

**1969 का पत्र पेटेंट अपील संख्या 15**
3 मार्च, 1970.

**भारत का संविधान (1950)-अनुच्छेद 311(1)-सरकारी सेवक को नियुक्ति करने वाले से उच्च प्राधिकारी द्वारा पदच्युत किया गया-ऐसी बर्खास्तगी-क्या अनुच्छेद 311(1) का उल्लंघन करती है।**

यह अभिनिर्धारित किया गया कि संविधान किसी राज्य के सभी सिविल सेवकों के कार्यकाल को उस राज्य के राज्यपाल की इच्छा के अधीन बनाता है। इस संबंध में एकमात्र प्रासंगिक प्रावधान जिसके अधीन राज्य के राज्यपाल की इच्छा है, वह संविधान के अनुच्छेद 311 का खंड (1) है। इस खंड द्वारा दी गई सुरक्षा इस आशय की है कि कोई भी व्यक्ति जो राज्य के अधीन नागरिक पद रखता है, उसे उसके अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त या हटाया नहीं जा सकता है जिसके द्वारा वह नियुक्त किया गया था। इस प्रकार यह केवल नियुक्ति प्राधिकारी से निचले प्राधिकारी द्वारा सेवा से निष्कासन या बर्खास्तगी है जो संविधान के अनुच्छेद 311 के खंड (1) से प्रभावित होती है। किसी उच्च प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को संविधान के अनुच्छेद 311(1) के संवैधानिक प्रावधान में निहित सुरक्षा का उल्लंघन करने वाला नहीं कहा जा सकता है।

(पैरा 2)

माननीय श्री न्यायमूर्ति बाल राज तुली के 26 नवंबर, 1968 को 1967 के सिविल रिट संख्या 955 में पारित फैसले के खिलाफ लेटर्स पेटेंट के खंड एक्स के तहत लेटर्स पेटेंट अपील।

सी. बी. कौशिक, महाधिवक्ता (हरियाणा), अपीलकर्ताओं के वकील।
डी.एन.अवस्थी, वकील, उत्तरदाताओं की ओर से।

प्रलय

1. आर.एस. नरूला, जे.-बलदेव कृष्ण शर्मा, प्रतिवादी नंबर 1, पंजाब के समग्र राज्य (पुनर्गठन के बाद हरियाणा को आवंटित) के सिंचाई विभाग के एक कर्मचारी, जिन्हें 23 नवंबर, 1962 से सेवा से निलंबित कर दिया गया

था, के ख़िलाफ़ आरोप(भ्रष्टाचार के आरोप) पत्र दायर किया गया था, और विभागीय जांच की रिपोर्ट की एक प्रति दिए जाने के बाद, जिसमें उन्होंने भाग लिया था, कारण बताने के लिए एक नोटिस दिया गया कि क्यों न उन्हें सेवा से बर्खास्त कर दिया जाए। उनके अभ्यावेदन पर विचार करने के बाद उन्हें हरियाणा के राज्यपाल के आदेश, दिनांक 12 मई, 1967 (अनुलग्नक 'ए-5') द्वारा तत्काल प्रभाव से सेवा से बर्खास्त कर दिया । प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा दायर की गई रिट याचिका को 26 नवंबर, 1968 के विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले द्वारा एक ही आधार पर अनुमति दी गई है कि प्रतिवादी के मामले में सक्षम दंड प्राधिकारी मुख्य अभियंता थे, और वह, इसलिए, हरियाणा के राज्यपाल का आदेश, जो मुख्य अभियंता से उच्च प्राधिकारी है, क्षेत्राधिकार के बिना है और रद्द किए जाने योग्य है क्योंकि यह प्रतिस्पर्धी प्रतिवादी को मुख्य अभियंता के आदेश के खिलाफ राज्य सरकार में विभागीय अपील के अधिकार से वंचित करता है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने, उस प्रस्ताव के लिए**, रोशन लाल गोगिया बनाम वित्तीय आयुक्त, हरियाणा और अन्य (1)**[1] में गुरदेव सिंह, जे के फैसले पर भरोसा किया है।

2. विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ लेटर्स पेटेंट के खंड 10 के तहत इस अपील में, हरियाणा राज्य के विद्वान वकील श्री सी.बी. कौशिक द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि नियुक्ति प्राधिकारी से निचले प्राधिकारी द्वारा सेवा से केवल निष्कासन या बर्खास्तगी ही है जो संविधान के अनुच्छेद 311 के खंड (1) से प्रभावित होती है और उच्च प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को उस संवैधानिक प्रावधान में निहित सुरक्षा का उल्लंघन करने वाला नहीं कहा जा सकता है।संविधान के अनुच्छेद 310 में अन्य बातों के साथ-साथ कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति जो राज्य के अधीन किसी भी नागरिक पद पर है, वह राज्य के राज्यपाल की मर्जी तक पद धारण करता है। यह निश्चित रूप से संविधान के स्पष्ट प्रावधान के अधीन है। इस संबंध में एकमात्र प्रासंगिक प्रावधान जिसके अधीन राज्य के राज्यपाल की इच्छा है, वह संविधान के अनुच्छेद 311 का खंड (1) है। उस खंड के प्रासंगिक भाग द्वारा दी गई सुरक्षा इस आशय की है कि कोई भी व्यक्ति जो राज्य के अधीन नागरिक पद रखता है, उसे उसके अधीनस्थ प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त या हटाया नहीं जा सकता है जिसके द्वारा उसे नियुक्त किया गया था। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि राज्य का राज्यपाल मुख्य अभियंता के अधीनस्थ प्राधिकारी नहीं है। श्री सी.बी. कौशिक, जिन्होंने इस मामले में बड़ी स्पष्टता और क्षमता के साथ बहस की है, ने **के.सी.चंद्रशेखरन बनाम केरल राज्य, (2)** में केरल उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच के फैसले और **जगन्नाथ प्रसाद शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (3)** व **मद्रास राज्य बनाम जी. सुंदरम",(4)** मामले में सुप्रीम कोर्ट के उनके आधिपत्य के निर्णयों का हवाला दिया। उपर्युक्त तीनों मामलों में निर्णय निस्संदेह अपीलकर्ता राज्य के मामले का समर्थन करता है। **जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के मामले (3) (सुप्रा)** में इस बिंदु पर मूल सुप्रीम कोर्ट के फैसले में, यह स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया था कि यह दलील कि राज्यपाल के पास जगन्नाथ प्रसाद शर्मा को सेवा से बर्खास्त करने की कोई शक्ति नहीं थी और ऐसी शक्ति केवल पुलिस महानिरीक्षक और संबंधित विनियमन में नामित अधिकारियों द्वारा प्रयोग किया जाना निरर्थक थी क्योंकि संविधान ने एक प्रांत के सभी सिविल सेवकों के कार्यकाल को उस प्रांत के राज्यपाल की इच्छा के अधीन बना दिया था। जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के मामले(3) (सुप्रा) में उनके आधिपत्य के आदेश का पालन करते हुए, **मद्रास राज्य बनाम जी. सुंदरम (4) (सुप्रा)** में आयोजित किया गया था कि भले ही अनिवार्य सेवानिवृत्ति को सेवा से बर्खास्तगी के बराबर कहा जा सकता है, राज्यपाल के पास जी. सुंदरम को बर्खास्त करने की शक्ति थी, हालांकि नियम राज्य के राज्यपाल के अधीनस्थ एक प्राधिकारी को उन्हें बर्खास्त करने के लिए अधिकृत करते थे। **के.सी.चंद्रशेखरन,(2) (सुप्रा), के मामले में** केरल उच्च न्यायालय द्वारा यह निर्धारित किया गया था कि सरकार द्वारा स्वयं जांच रिपोर्ट प्राप्त करने और उसकी जांच पर जुर्माना लगाने में न तो कोई अनुचितता थी और न ही कोई अवैधता थी। यह दलील कि

(1) 1968 S.L.R 650
(2) A.I.R 1964 Kerala 87
(3) A.I.R 1961 S.C 1245
(4) A.I.R 1965 S.C 1103

सरकारी कर्मचारी को नियुक्ति प्राधिकारी के आदेश के खिलाफ सरकार के पास अपील करने के अधिकार से वंचित कर दिया गया है क्योंकि रिपोर्ट बाद में प्रस्तुत की गई थी और उसके द्वारा जुर्माना लगाया गया था, बिना किसी बल के माना गया था।

3. प्रतिस्पर्धी प्रतिवादी के विद्वान वकील श्री डी.एन.अवस्थी ने प्रस्तुत किया कि यदि किसी सरकारी अधिकारी को कुछ विभागीय नियमों द्वारा कोई शक्ति प्रदान की जाती है, तो इसका प्रयोग उन नियमों के अनुसार किया जाना चाहिए या बिल्कुल भी प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। इस प्रस्ताव के लिए **गुजरात बिजली बोर्ड बनाम गिरधारीलाल मोतीलाल और अन्य, (5)**[2] में सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर भरोसा रखा गया था। उस मामले में बस इतना कहा गया कि विद्युत अधिनियम, 1910 की धारा 6(1) के प्रावधान अनिवार्य हैं और उनका सख्ती से अनुपालन किया जाना चाहिए। उस अधिनियम की धारा 6(1), राज्य विद्युत बोर्ड को लाइसेंसधारी की संपत्ति छीनने की शक्ति प्रदान करती है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया कि ऐसी शक्ति का प्रयोग कानून के अनुसार सख्ती से किया जाना चाहिए और इसका प्रयोग क़ानून में प्रदान किए गए तरीके से किया जाना चाहिए और किसी अन्य तरीके से नहीं। उपर्युक्त प्रावधान में कहा गया है कि निर्धारित नोटिस में लाइसेंसधारी को उपक्रम बेचने के लिए विशेष रूप से बुलाया जाना चाहिए। यह माना गया कि कानून का आदेश स्पष्ट था और इसका पालन किया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में ऐसा कोई विचार नहीं उठता। अनुच्छेद 311 (1) का अधिदेश स्पष्ट है और प्रथम प्रतिवादी के मामले में इसका उल्लंघन नहीं किया गया है। प्रासंगिक सेवा नियम, जिसका संदर्भ आगे दिया गया है, में यह नहीं कहा गया है कि सिंचाई विभाग के किसी कर्मचारी को बर्खास्तगी का दंड नियम में नामित प्राधिकारी से उच्च प्राधिकारी द्वारा नहीं दिया जाएगा। इसलिए, इस मामले के तथ्यों पर किसी भी नियम के उल्लंघन का कोई सवाल ही नहीं उठता। इसमें कोई संदेह नहीं है कि संविधान के अनुच्छेद 310 के तहत राज्यपाल की इच्छा के प्रयोग का तरीका अनुच्छेद 311 और संविधान के अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए नियमों द्वारा नियंत्रित होता है। एक सरकारी कर्मचारी के पास वास्तव में एक उचित शिकायत हो सकती है यदि उसकी सेवाएं अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए नियम के उल्लंघन में समाप्त कर दी जाती हैं, खासकर यदि इस तरह के उल्लंघन से संबंधित कर्मचारी के साथ पूर्वाग्रह और अन्याय होता है। यह तर्क देने के लिए कि सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त दो निर्णय और केरल उच्च न्यायालय की खंडपीठ के फैसले का इस मामले में कोई अनुप्रयोग नहीं है, श्री अवस्थी ने बताया कि जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के मामले में, (3), यह विशेष रूप से सुप्रीम कोर्ट द्वारा देखा गया कि उत्तर प्रदेश पुलिस रेगुलेशन के रेगुलेशन 479 क्लॉज (ए) के तहत राज्यपाल को सभी पुलिस अधिकारियों को दंडित करने की पूरी शक्ति दी है, जो संबंधित पुलिस रेगुलेशन द्वारा उन्हें बर्खास्त करने के लिए निचले विभागीय प्राधिकारी को दिए गए अधिकार से स्वतंत्र है। इसी प्रकार जी. सुंदरम के मामले,(4), में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह देखा गया कि प्रासंगिक नियम नामित सक्षम प्राधिकारी "या किसी उच्च प्राधिकारी" को प्रासंगिक दंड लगाने के लिए अधिकृत करता है और यहां तक कि के.सी. चंद्रशेखरन के मामले (2) में भी केरल उच्च न्यायालय द्वारा यह निर्णय लिया गया प्रासंगिक नियम समान शर्तों में था। सिंचाई विभाग में एक क्लर्क के रूप में चुनाव लड़ने वाला प्रतिवादी पंजाब लोक निर्माण विभाग (सिंचाई शाखा) प्रधान कार्यालय, लिपिक (राज्य सेवा वर्ग III) नियम, 1965 (पंजाब सरकार राजपत्र, भाग III में प्रकाशित, दिनांक 13 अगस्त, 1965 पृष्ठ 895 से 904 तक)द्वारा शासित था।1965 के नियमों का नियम 14 जो अनुशासन, दंड और अपील से संबंधित है, निम्नलिखित शर्तों में है: -

"(1) अनुशासन, दंड और अपील से संबंधित मामले में, सेवा के सदस्य समय-समय पर संशोधित पंजाब सिविल सेवा (दंड और अपील) नियम, 1952 द्वारा शासित होंगे:

बशर्ते कि लगाए जा सकने वाले दंडों की प्रकृति, ऐसे दंड लगाने का अधिकार रखने वाला प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी भारत के संविधान के तहत बनाए गए कानून या नियम के अधीन, इन नियमों के परिशिष्ट 'बी' में निर्दिष्ट है।

---

[2](5) A.I.R 1969 S.C 267

(2) पंजाब सिविल सेवा (दंड और अपील) नियम, 1952 के नियम 10 के उप-नियम (1) के खंड (सी) और (डी) के तहत आदेश पारित करने के लिए सक्षम प्राधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी इस प्रकार होंगे जैसा कि इन नियमों के परिशिष्ट 'सी' में निर्दिष्ट है।"

1965 के नियमों के परिशिष्ट 'बी' में "क्लर्कों" के खिलाफ नामित बर्खास्तगी सहित सभी दंड लगाने का अधिकार रखने वाले प्राधिकारी को मुख्य अभियंता के रूप में नामित किया गया है और कॉलम 4 में नामित अपीलीय प्राधिकारी "सरकार" है। पंजाब सिविल सेवा (दंड और अपील) नियम, 1952 के नियम 14 का उप-नियम (1), इसके प्रावधान के अधीन, प्रतिवादी की सेवा पर लागू होता है। 1952 के नियमों का नियम 14 (पंजाब सिविल सेवा नियमों के परिशिष्ट 24 में प्रकाशित, खंड I, भाग II पृष्ठ 174 पर) इस प्रकार है:

"सरकार या विभागाध्यक्ष किसी भी मामले के रिकॉर्ड मंगवा सकते हैं और उनकी जांच कर सकते हैं जिसमें किसी अधीनस्थ प्राधिकारी ने नियम 10 के तहत कोई आदेश पारित किया हो या नियम 4 में निर्दिष्ट कोई दंड दिया हो या जिसमें कोई आदेश पारित नहीं किया गया हो या कोई जुर्माना नहीं लगाया गया हो और आगे की जांच करने के बाद, यदि कोई हो, पुष्टि कर सकता है, माफ कर सकता है, कम कर सकता है या नियम 11 के उप-नियम (1) के प्रावधानों के अधीन, जुर्माना बढ़ा सकता है या नियम 7, 8 और 9 के प्रावधानों के अधीन नियम 4 में निर्दिष्ट दंडों में से कोई भी दंड लगा सकता है।"

ऊपर उद्धृत 1952 के नियमों का नियम 14 स्पष्ट रूप से सरकार, यानी राज्यपाल को अनुशासनात्मक कार्यवाही से संबंधित किसी भी मामले के रिकॉर्ड को मांगने या जांचने के लिए अधिकृत करता है जिसमें कोई आदेश पारित नहीं किया गया है और कोई जुर्माना नहीं लगाया गया है और नियमों के नियम 4 में निर्दिष्ट दंड, जिसमें बर्खास्तगी भी शामिल है, में से कोई भी दंड लगा सकता है।1952 के नियमों का नियम 14, सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए, जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के मामले, (3) (सुप्रा) में संदर्भित पुलिस नियमों के विनियमन 479 (ए) द्वारा राज्य सरकार में निहित सामान्य शक्ति से मेल खाता है। इसलिए, हम सुप्रीम कोर्ट द्वारा तय किए गए उन मामलों जिनका संदर्भ पहले ही दिया जा चुका है और वर्तमान मामले में अंतर निकालने में असमर्थ हैं जहां तक कि निचले नामित अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित किए जाने के बजाय राज्य सरकार द्वारा पारित बर्खास्तगी के आदेश की वैधता का सवाल है।

4. श्री अवस्थी ने तब **पंजाब राज्य और एक अन्य बनाम हरि किशन शर्मा, (6)**[3]में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का हवाला दिया, जिसमें यह निर्धारित किया गया था कि राज्य सरकार का अधिकार क्षेत्र ग्रहण करना उचित नहीं है जो पंजाब सिनेमा (विनियमन) अधिनियम की धारा 5 द्वारा लाइसेंसिंग प्राधिकारी को प्रदान किया गया है। यह माना गया कि यदि राज्य सरकार को निपटान के लिए सिनेमा लाइसेंस के लिए सभी आवेदनों को अग्रेषित करने की आवश्यकता होती है, तो यह वास्तव में खुद को मूल प्राधिकरण में परिवर्तित कर देता है, हालांकि पंजाब सिनेमा (विनियमन) की धारा 5 की उप-धारा (3) के तहत ) अधिनियम के अनुसार, लाइसेंसिंग प्राधिकारी द्वारा लाइसेंस के लिए अपने आवेदन को अस्वीकार करने से व्यथित व्यक्ति द्वारा राज्य सरकार के समक्ष अपील की जा सकती है। जाहिर तौर पर किसी सरकारी कर्मचारी पर जुर्माना लगाने के मामले की तुलना में सिनेमैटोग्राफ लाइसेंस देने के मामले में अलग-अलग विचार लागू होते हैं। नियमों में प्रावधान है कि जहां राज्य सरकार दंड देने वाली प्राधिकारी है, वहां राज्य सरकार के आदेश के खिलाफ कोई अपील नहीं की जा सकती है, हालांकि एक मेमोरीयल राज्यपाल के पास होता है। अपील का अधिकार वास्तव में एक वैधानिक अधिकार है और इसका अस्तित्व तब तक नहीं है जब तक कि यह विशेष रूप से कानून द्वारा प्रदान नहीं किया गया हो। ऐसे मामले में जहां सजा राज्य सरकार द्वारा दी गई है, कोई भी कानून अपील का अधिकार प्रदान नहीं करता है। किसी को भी उस चीज़ से वंचित होने की शिकायत करने की अनुमति नहीं है जो कभी अस्तित्व में ही नहीं थी। मामले पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद, हमारी राय है कि संविधान के अनुच्छेद 310 के तहत राज्यपाल की इच्छा केवल अनुच्छेद 311 में निहित अपवाद और अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए नियमों के अधीन है। अनुच्छेद

[3](6) A.I.R 1966 S.C 1081

311 को स्वीकार नहीं किया गया है। अनुच्छेद 309 के तहत बनाए गए नियम विशेष रूप से राज्य सरकार को किसी भी दंड का मूल आदेश पारित करने की अनुमति देते हैं। इसलिए, किसी भी वैधानिक नियम का उल्लंघन नहीं किया गया है।

5. श्री अवस्थी द्वारा दिया गया एकमात्र अन्य तर्क यह है कि पहले प्रतिवादी को सेवा से बर्खास्तगी की सजा देने में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है, यहां तक कि कारण बताओ नोटिस के जवाब में प्रस्तुत अपने अभ्यावेदन में विशेष रूप से मांगे जाने के बावजूद राज्यपाल द्वारा उन्हें कोई मौखिक सुनवाई की अनुमति नहीं दी गई।हरियाणा के राज्यपाल के अनंतिम रूप से संतुष्ट होने के बाद कि प्रतिवादी को बर्खास्तगी की सजा दी जानी थी, प्रतिवादी को कारण बताओ नोटिस दिया गया था। उनसे लिखित में अपना अभ्यावेदन देने को कहा गया। अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का अवसर अपर्याप्त होने के बारे में कोई शिकायत नहीं है। उन्होंने वास्तव में एक विस्तृत अभ्यावेदन प्रस्तुत किया। प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से कोई शिकायत नहीं है कि अभ्यावेदन पर उचित रूप से विचार नहीं किया गया। उनका एकमात्र दावा यह है कि राज्यपाल उनके मामले पर निर्णय लेने से पहले उन्हें व्यक्तिगत सुनवाई देने के लिए बाध्य थे। हम इस प्रस्ताव के समर्थन में कोई कानून नहीं ढूंढ पा रहे हैं। प्रतिवादी नंबर 1 को प्रस्तावित सजा के खिलाफ कारण बताने का पर्याप्त अवसर दिया गया था और उस पर उचित विचार करने के बाद ही सर्वोच्च राज्य प्राधिकरण ने विवादित आदेश पारित किया था। हम इसमें हस्तक्षेप करने का अपना तरीका ढूंढने में असमर्थ हैं।

6. इस मामले में प्रतिवादी के विद्वान वकील द्वारा किसी अन्य बिंदु पर बहस नहीं की गई। **जगन्नाथ प्रसाद शर्मा (3), और जी. सुंदरम (4)** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की आधिकारिक घोषणाओं और **के.सी. चन्द्रशेखरन के मामले,(2),** में केरल उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच की टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए, जिसके साथ हम सम्मानजनक समझौते में हैं, हम इस अपील की अनुमति देते हैं व विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले को रद्द करते हैं, और पहले प्रतिवादी की रिट याचिका को लागत सहित खारिज करते हैं।वकील की फीस रु. 100 है।
मेहर सिंह. सी० जे०- मैं सहमत हूँ।

**अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।**

**बेनिका**

**प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी**

**(Trainee Judicial Officer)**

**हरियाणा**